श्रीराम का दूसरा विवाह

चेतना की शिखर यात्रा 1 चैप्टर 20

श्रीराम की प्रथम पत्नी सरस्वती देवी के देहांत के बाद कुछ उदासी सी छा गयी थी। दुनियादारी या घर गृहस्थी में श्रीराम का मन पहले भी कोई खास नहीं रमता था ।वे पारिवारिक दायित्वों की उपेक्षा तो नहीं करते थे लेकिन ऐसा भी नहीं था कि उसी की चिंता में व्यस्त रहते हों या बहुत ज्यादा परवाह करते हों । लगाव और उदासीनता में एक स्थिति का चुनाव करना हो तो उनके बारे में कह सकते हैं कि उनकी प्रवृत्ति मध्यमार्गी (middle way) थी। मध्यमार्गी होते हुए भी श्रीराम उदासीनता की ओर झुके हुए थे। पत्नी सरस्वती देवी के निधन ने उनकी उदासीनता को और भी बढ़ा दिया था । अंतिम और मरणोत्तर संस्कार संपन्न होने के बाद ताई जी ने इस स्थिति को अनुभव किया। भोजन आदि के मामले में श्रीराम की दिनचर्या वर्षों से अनुशासित थी। जौ के आटे की रोटी और गाय के दूध से बनी छाछ के अलावा वे कुछ नहीं लेते थे। स्वाधीनता आंदोलन में भागीदारी के दिनों में कुछ शिथिलता आई थी। आहार का कठोर व्रत निभाने में कठिनाई और व्यस्तताओं के कारण यह शिथिलता कुछ वर्ष ही चली। अखंड ज्योति' का प्रकाशन आरंभ होने के दो वर्ष पूर्व फिर वैसे ही व्रत नियम निभाये जाने लगे। आशय यह कि उनका जीवन तपस्वी, वैरागियों जैसा पहले ही था। दाम्पत्य जीवन सूना हो जाने के बाद लोगों से बोलना, बातचीत करना कम होने लगा। वे खोये खोये से रहने लगे।

लेखन, सेवा और लोकमंगल की साधना में श्रीराम पहले की तरह सक्रिय थे लेकिन ताई जी ने इस क्षेत्र में भी एक मामूली बदलाव देखा। लोगों से

मिलते जुलते समय वे हास्य विनोद कर लिया करते थे। उनकी चुटकियाँ और हल्की फुलकी बातें रोगियों के चेहरों पर छाई उदासी मिटा देती थी, वे हँसने लगते थे। ताई जी ने देखा कि बहू के नहीं रहने के बाद श्रीराम ने हँसना बोलना कम कर दिया है। वे अपने काम में चुपचाप लगे रहते। मिलने आए लोगों से गंभीर होकर बातें करते। रोगियों को उनके कष्ट पूछकर, लक्षण आदि देख कर दवायें देते और भोजन आदि बताकर उन्हें वापस भेज देते। उनके पास आने वाले पहले से आते रहे रोगियों ने भी अनुभव किया कि श्रीराम को उदासी घेर रही है। कुछ अधिक मुँह बोले लोगों ने भी ताई जी से यह बात कही ।

ताई जी यह परिवर्तन बहुत बारीकी और गौर से देख रही थी। तीनों बच्चे दादी के पास ही सोते थे। पिता से घुल मिल नहीं पा रहे थे। एक तो शुरू से उनका सान्निध्य नहीं मिला था और दूसरे माँ के अचानक चले जाने ने भी उन्हें अपनी उम्र से बड़ा बना दिया था। वे देखते थे कि पिता को जप-तप, लेखन और संपर्क आदि के कामों में बहुत ही व्यस्त रहना पड़ता है। अपने लिए भी उनके पास समय नहीं है और वे पहले भी दादी के पास ही रहते आये थे।

पत्नी के स्वर्गवास के बाद घर के छोटे-मोटे काम श्रीराम ही देखने लगे थे। ताई जी ने शुरू में रोका, उस समय तो उन्होंने कुछ नहीं कहा लेकिन जब वे इधर उधर होतीं तो अपने, बच्चों के तथा ताई जी के जो भी कपड़े रखे

होते उन्हें भी धो डालते। श्रीराम के बेटे ओमप्रकाश ने एक दिन उन्हें कपड़े धोते समय थोड़ा थका हुआ देखा और उनके पास जाकर बोला, “लाइये पिताजी में धुलवा देता हूँ।” श्रीराम पुत्र की बात सुनकर थोड़ा रुके और फिर बोले, “तुम अपनी पढ़ाई पूरी करो। यह काम हो जाएगा।” ओमप्रकाश ने कहा, “लाइए पिताजी, आप थक रहे हैं। मैं झटपट निपटा लेता हूँ।” ओमप्रकाश उस समय 10- 12 वर्ष के ही होंगे। श्रीराम ने बहुत बार मना किया। यह भी समझाया कि तुम्हारे हाथ छोटे हैं, इनमें कपड़े नहीं आएंगे। बालक की पितृभक्ति का इससे समाधान नहीं हुआ। वह ज़िद करने लगा तो श्रीराम ने डपट दिया। ओमप्रकाश रोते हुए ताई जी के पास चले गए। दादी ने पोते को समझा बुझा कर चुप करा लिया।

माँ की पुत्रवधू कामना

ताई ने रात को दस साढ़े दस बजे श्रीराम के कमरे में झांका। देखा वे जाग रहे हैं। आमतौर पर वे साढ़े आठ नौ बजे तक सो जाया करते थे क्योंकि प्रातः जल्दी उठना होता था । साढ़े दस बजे जागते देख ताईजी चौंकी। उन्होंने पूछा भी कि अभी तक क्यों जाग रहे हो, सो क्यों नहीं जाते? श्रीराम ने अनमना सा जवाब दिया। ताईजी ने समझा कोई काम रह गया होगा। इसलिए अभी तक सोना नहीं हो पाया है। वे भीतर चली आईं और बिना किसी भूमिका के बोलीं, “तुमने आज सुबह ओम को डांटा,अच्छा नहीं किया।” श्रीराम ने कहा, “वह ज़िद कर रहा था इसलिए थोड़ा डांटा

था।” ताई जी ने कहा, “उसे तुम्हारा ख्याल है। बहू के नहीं रहने के बाद तुम अकेले पड़ गये हो। उसे यह बात महसूस होती होगी। बच्चे बिना माँ के हैं।उन्हें भी अकेलापन काटता होगा।” श्रीराम चुपचाप सुने जा रहे थे।ताई जी ने दैनिक जीवन में आने वाली कठिनाइयों और गृहस्थी की आवश्यकताओं पर व्याख्यान सा देते हुए कहा, “ मैंने तीनों बच्चों के लिए माँ लाने का फैसला किया है” श्रीराम ताई की चतुराई पर हँसे। अगर ताई जी कहतीं कि तुम्हारा फिर से विवाह करना है तो शायद मना कर देते। बच्चों के लिए माँ लाने के प्रस्ताव पर निषेध अधिकार का प्रयोग कठिन था। फिर भी श्रीराम ने कहा, “लेकिन मैं कोई नई ज़िम्मेदारी ग्रहण करने के पक्ष में नहीं हूँ। एक बार विवाह हो गया काफी है। भगवान ने अकेला रखकर आगे की राह दिखा दी है।” इतना कहना था कि ताई जी फट पड़ी। उनके मन में वर्षों पहले आई और आकर सो गई आशंका हड़बड़ा कर जाग उठी। वे बोली, “क्या राह दिखा दी, मैं भी सुनूं तो ज़रा,अब संन्यासी बनेगा क्या? मुझे दिया वचन तोड़ेगा क्या? वनखंड में जाएगा, इन बच्चों का क्या होगा? मेरा क्या होगा?” ताई जी ने इतने सारे उलाहने दिए, दुहाई दी और फटकार लगाई कि श्रीराम से उन्हें बीच में रोकते नहीं बना। वे थोड़ी चुप हुई तो फिर से बोलीं, “संन्यासी होने के लिए मैने कब रोका है। अकेला रह कर क्या करेगा,मैं देखती नहीं हूँ क्या कि दिनोदिन तुम जिंदगी से दूर होते जा रहे हो। न खाने पीने की सुध है और न ही सोने-जागने की। हँसना बोलना भी भूल गये हो। यह सब नहीं चलेगा।”

ताई जी द्वारा दिए गए इस निर्धारण को श्रीराम न टाल सके और न ही स्वीकार सके। श्रीराम अपने भावी जीवन की रूपरेखा बना चुके थे। उसके अनुसार महापुरश्चरण साधना पूरी होते ही अपनी मागदर्शक सत्ता के प्रत्यक्ष सान्निध्य में चले जाना है। लोकरंजन के लिए जो कुछ करना है, वह इसी अवधि में संपन्न कर लेने की साध बना ली थी। ताई जी इतना ही कहकर चुप नहीं बैठ गईं। उन्होंने आंवलखेड़ा में अपने देवर रामप्रसाद शर्मा के पास तुरंत संदेश भिजवाया। गाँव में उनकी खेतीबाड़ी और ज़मींदारी का काम वही देखते थे। संदेश भेजने की बात श्रीराम को बाद में पता चली, वह भी चाचा रामप्रसाद के मथुरा आने के बाद । उस समय श्रीराम चूना-कंकड़ मोहल्ले में रहते थे। ताई जी का फरमान जारी होने के तीसरे दिन ही चाचा वहाँ आ गए। कहने लगे, "भाभी आपको कहना पड़ा, यह हमारे लिए लज्जा की बात है लेकिन हम चुप नहीं बैठे थे। श्रीराम के छोटे चचेरे भाई जगन्नाथ का रिश्ता तय हो चुका था। इसी वैशाख में विवाह तय किया है। आपकी देवरानी कहने लगी बड़े भाई का घर बसाए बिना छोटे का ब्याह करना ठीक नहीं होगा। आप चिंता न करें। जल्दी ही आपके घर में चूड़ियां खनकेंगी।" चाचा ने श्रीराम से पूछने की जरूरत नहीं समझी। सिर्फ इतना ही कहा कि विवाह होने तक भाभी (ताई जी) का पूरा ख्याल रखना। उन्हें किसी तरह का कष्ट न हो। लगे हाथों वे यह भी कह गए कि गृहस्थी का काम नहीं संभल रहा हो तो नौकर चाकर का इंतजाम कर ले। श्रीराम ये सब बातें अनमने भाव से सुन रहे थे। कुछ

समय तक तो उनके मन में संघर्ष रहा कि इस स्थिति से कैसे निपटा जाए, फिर अपनेआप ही समाधान हो गया। संघर्ष जब प्रगाढ़ होने लगा तो भीतर से भाव जगा कि साधना का कार्य तो मार्गदर्शक सत्ता ही निभा रही है। जो उचित होगा, वही होगा। उसकी इच्छा आकांक्षा के विपरीत कुछ भी नहीं हो सकता।

साधना में मिले संकेत

1943 के मई मास की ही कोई तिथि रही होगी। जप ध्यान में हमेशा की तरह तन्मयता रही। पाँच साढ़े पाँच घंटे के आसन और इष्ट से एकाकार हो जाने वाली प्रगाढ़ स्थिति ने श्रीराम के शरीर के रंग को तपे हुए सोने जैसा कर दिया था। आसन से उठते हुए अपने व्यक्तित्व में भी उन्हें यह आंच अनुभव होती थी। जिन दिनों यह स्थिति बनना आरंभ हुई, उन दिनों थोड़ी असुविधा तो होती थी लेकिन बाद में अभ्यास हो गया। आसन से उठने के बाद वे हाथ मुँह धोते, सिर पर पानी छिड़कते और कुछ देर तुलसी की क्यारी या गाय के पास खड़े रहते।

उस दिन श्रीराम उठने लगे तो उन्हें प्रतीत हुआ कि पूजा कक्ष में वे अकेले नहीं हैं। उनके साथ किसी और साधक ने भी समर्पण किया है। उस साधक की उपस्थिति का बोध हुआ। उन्होंने आसपास देखा लेकिन कहाँ कोई नहीं था। फिर भी उपस्थिति का आभास हो रहा था। बोध के प्रति वे थोड़े जागरुक हुए तो वह प्रतीति समाप्त हो गई। लेकिन अगले दिन फिर वही

अनुभव हुआ। लगा कि समर्पण का मंत्र किसी और ने भी समवेत स्वर में पढ़ा है। स्वर कंठ में ही गूंजा था। मुँह से ध्वनि नहीं हुई थी। वह पश्यंती स्तर तक ही व्याप्त हुआ था लेकिन अनुभव हो रहा था। यह सिलसिला तीन दिन तक चलता रहा। तीसरे दिन जाकर स्थिति स्पष्ट हुई। अनुभव हुआ कि आसान के पास वाले भाग में एक दुबली पति किशोरी कन्या बैठी हुई है। वही साथ-साथ मन्त्र पढ़ती जा रही है और संकल्प करते हुए पृथ्वी पर जल छोड़ रही है। इन तीन दिनों में यह प्रतीति भी प्रकट हुई कि साधना के अंतिम चरण में जैसी दाहक ऊष्मा अनुभव होती थी वह शांत और शीतल होने लगी। वैसी गर्मी का अब लोप सा हो गया था। कहीं यह उस किशोरी की उपस्थिति का प्रभाव तो नहीं है। मन में प्रश्न उठा लेकिन ज़्यादा देर तक टिका नहीं।

आंवलखेड़ा की हवेली से भूतों वाली बिल्डिंग मथुरा तक की यात्रा :

परम पूज्य गुरुदेव और वंदनीय माता जी का व्यक्तित्व इतना विशाल और विस्तृत है कि इसे सीमाबद्ध करना बहुत ही कठिन है और तथ्यों की overlapping स्वाभाविक ही है। अधिकतर उपलब्ध साहित्य में गुरुदेव के निवास के सम्बन्ध में जन्मभूमि आंवलखेड़ा की हवेली और मथुरा स्थित भूतों वाली बिल्डिंग का ही वर्णन मिलता है लेकिन हमारी रिसर्च, जो चेतना की शिखर यात्रा के चैप्टर 19 और 20 पर आधारित है, कुछ और घरों को भी दिखा रही है। 1938-39 के दिनों में जब गुरुदेव

"सैनिक" समाचार पत्र से सम्बंधित थे और अखंड ज्योति पत्रिका के लिए संघर्ष कर रहे थे तो अकेले एक ही कमरे में रहते थे। उन्ही दिनों ताई जी ने जब सरस्वती देवी को साथ आगरा ले जाने के लिए कहा था तो गुरुदेव ने फ्रीगंज मोहल्ला में 3 कमरों का मकान ले लिया था। बाद में शायद ताई जी भी इधर ही आ गयी थीं। "शायद" इस लिए लिख रहे हैं कि मकान का वर्णन है लेकिन ताई कब आईं उसका वर्णन इतना definite नहीं मिलता। उसके बाद गुरुदेव ने एक और 12 कमरों वाले मकान का मन बनाया था ,बातचीत भी की थी लेकिन दो परिवारों में कुछ झगड़ा होने वाली सम्पति के कारण बात बन नहीं सकी थी। यह मकान डेम्पियर पार्क एरिया में था। आखिरकार घीआ मंडी स्थित 9 कमरों का मकान जो भूतों वाली बिल्डिंग के नाम से प्रसिद्ध है, गुरुदेव का निवास स्थान बना। इस बिल्डिंग में गुरुदेव परिवार सहित लगभग 30 वर्ष रहे। यह वही बिल्डिंग है जहाँ से विश्व भर में फैली अखंड ज्योति पत्रिका का हेड ऑफिस है। आने वाले लेखों में हम इस बिल्डिंग के बारे में डिटेल में वर्णन देने के साथ ही आदरणीय चतुर्वेदी जी के साथ हमारे द्वारा शूट की गयी वीडियो भी देखेंगें।

जिस तरह गुरुदेव के निवास के बारे में विस्तृत जानकारी मिलती है उसी प्रकार भिन्न-भिन्न पुस्तकों में वंदनीय माता जी के साथ विवाह की भी विस्तृत जानकारी मिलती है। 21 जून 2020 को हमने एक लेख लिखा था जिसका शीर्षक था "वंदनीय माता जी के विवाह के भिन्न-भिन्न 3 वर्ष ?"

यह लेख हमारी वेबसाइट पर उपलब्ध है। आज जब माता जी के विवाह की बात हो रही है तो इसका रेफरन्स आना स्वाभाविक है। 1943, 1945 और 1946 वर्ष होने का कारण जो उस समय दिया था उसी को आज भी रिपीट कर रहे हैं : गुरुदेव का साहित्य copyrighted न होने के कारण हर किसी लेखक का अपना रिसर्च का स्तर है। हर कोई अपने हिसाब से उसे प्रकाशित किये जा रहा है (जैसे हम भी कर रहे हैं), लेकिन जिस समय भी किसी तथ्य पर संशय हो उसे correct करना भी हम सबकी ज़िम्मेदारी है। हो सकता है हमें भविष्य में और भी तथ्य मिलें, उसी समय यथासंभव एडिट करने का प्रयास करेंगें। प्रत्येक लेख की भांति यह लेख भी हमने शांतिकुंज भेजा था।

तो आइए परम पूज्य गुरुदेव के दूसरे विवाह की बात वहीँ से आगे बढ़ाते हैं जहाँ पिछले लेख में छोड़ी थी। गुरुदेव के चाचा रामप्रसाद मथुरा आये और देहरी पर पांव रखते ही अपनी भाभी(ताई जी) को पुकारा। अंदर आते ही घोषणा कर दी कि श्रीराम के लिए बहू मिल गई है। बहुत सुशील और नेक स्वभाव की है । खेलने कूदने में उसका मन कम लगता है। चिड़ियों को दाना चुगाने, गाय, बकरी, कुत्ते आदि चौपायों को चारा,रोटी खिलाने और घर आने वालों के लिए पानी लाने, उनकी सेवा करने में ही मन रमता है। यह सब विवरण देते हुए रामप्रसाद जी ज़ोर से हँस दिए। ताईजी ने कहा, “कुछ नाम पता भी बताओगे, घर परिवार के बारे में भी कोई पूछताछ की है या नहीं” रामप्रसाद जी एक बार फिर हँसे और कहने

लगे, “सब पूछ लिया है भाभी। आप मना नहीं करेंगी। बस लगन की तैयारी कीजिए।”

माता भगवती देवी जी का बाल्यकाल :

इसके साथ ही बच्चों के लिए चुनी गई माँ का ब्यौरा देने लगे। सांवलिया (कई पुस्तकों में सांवरिया भी लिखा है) बोहरे (आगरा) के जसवंतराय बोहरे के परिवार में जन्मी भगवती देवी की उम्र लगभग 16-17 वर्ष की होगी। रिश्ते की बात लेकर आए श्रीराम के चाचा ने रंगरूप के बारे में बताया कि वे सांवली और दुबली पतली हैं। अपने पिता की चौथी संतान हैं और भजन पूजन में ही ज्यादा समय बिताती हैं। 4-5 वर्ष की होते ही उन्होंने शिव की आराधना शुरू कर दी। बिना सिखाये ही पंचाक्षरी मंत्र का जाप किया। पालथी मारकर मकान के ही एक हिस्से में बने शिवालय में जा बैठी और भगवान शंकर के सामने बैठकर नमः शिवाय पढ़ने लगीं। कुछ दिन बाद उन्होंने पूर्व दिशा में लालिमा लिये उदित हो रहे सूर्य की ओर टकटकी लगाकर देखा। कुछ मिनट निहारती रहीं और पूजा के समय अलग से रखा जल सविता देवता को चढ़ा दिया।

पूजा पाठ में रुचि के बारे में सुनकर ताई जी को भारी संतोष हुआ। श्रीराम के अकेले रह जाने के बाद उन्हें चिंता होने लगी थी, उसका निराकरण हो गया। पुत्र के तपस्वी जीवन में और अधिक कठोरता आने से वे चिंतित रहने लगीं थीं कि वैराग्य भाव और बढ़ा तो श्रीराम कहीं साधु संन्यासी न

हो जाए। भगवती देवी के भक्तिभाव को जानकर वे जैसे आश्वस्त हुई। लगा कि उनका भक्तिभाव श्रीराम के वैराग्य और ज्ञाननिष्ठा को बाँधे रखेगा।

रामप्रसाद जी ने कन्या के बारे में यह भी बताया कि घर में गायों की देखभाल भी वही करती हैं । श्यामवर्ण की एक गाय तो भगवती देवी से इतनी घुली मिली है कि चारा पानी भी कन्या के हाथ से ही लेती है। सुबह के समय सामने पहुंचने में देर हो जाए तो रंभाने लगती है। वह स्वर अलग ही तरह का होता है जैसे पुकार रही हो। रामप्रसाद जी ने बताया कि भगवती देवी को घर में सब लोग लाली कहते हैं। सबसे छोटी है । जब वे पाँच वर्ष की थीं, तभी माँ का निधन हो गया था। तीनों भाई बहिनों ने अपनी छोटी बहन का विशेष ध्यान रखा। पिता ने भी ध्यान रखा कि बेटी को माँ की कमी का आभास न हो। वे भी भगवती देवी को लाली कहते थे। बचपन में खेलने कूदने का भी कोई भाव नहीं था। रामप्रसाद जी ने कहा कि पंडित जी बता रहे थे कि लाली के पास कपड़े की बनी एक गुड़िया थी। वह अक्सर बीमार पड़ जाती और लाली सेवा टहल करने लगती। गुड़िया के हाथ पाँव ज़रा भी टेड़े मेड़े होते, कपड़ा गंदा हो जाता तो वे चिंता करने लगती। बीमारों की तरह उसकी देखभाल करती, वैद्यजी बुलाये जाते, वैद्यजी भी कपड़े से बनाये गुड्डे ही होते । वे आते,नब्ज देखते, कोई नुस्खा बताते और लाली नुस्खा तैयार करने में जुट जाती। जड़ी बूटियाँ इकट्ठी करती, उन्हें कूटती पीसती, काढ़ा बनाती, लेप करती। इस

उपचार में गुड़िया थोड़ी मैली हो जाती तो उपचार पूरा होने के बाद उसे नहलाती, धुलाती कपड़े बदलती।

यह सुनकर तो ताईजी भी हँसे बिना नहीं रहीं कि उनकी होने वाली बहू ने गुड़िया के लिए एक अलग रसोई भी बना रखी थी। वहीं उसका भोजन तैयार होता। उससे मिलने के लिए लोग (गुड्डे, गुड़िया) आते जाते रहते थे। उनका भोजन भी रसोई में तैयार होता। आने वालों को भोजन किए बिना जाने नहीं दिया जाता था। गुड्डे-गुड्डियों से खेलने की उम्र तक लाली यही सब करती थी। बाद में वे घर आये लोगों की आवभगत में व्यस्त रहने लगी। उनके लिए पानी लाना, भोजन के लिए पूछना, स्वल्पाहार की व्यवस्था करने जैसे मोर्चे संभाल लिए। छोटी उम्र में गुड्डे-गुड्डियों की आवभगत ही बाद में आगंतुक अतिथियों के सत्कार में बदल गई।

10 मार्च 1946 को भगवती देवी जी का विवाह दिवस:

श्रद्धा-भक्ति और अतिथि सत्कार के गुणों ने ताई जी को मुग्ध कर लिया। उन्होंने बिना देखे और पूछताछ किये ही रिश्ते के लिए हाँ कह दी । संबंध निश्चित करने के लिए जसवंत रायजी सिर्फ एक बार आये। उन्होंने दामाद के बारे में पास पड़ौस या कहीं और छानबीन करने के बजाय जन्मकुंडली देखी। देखकर कह दिया दोनों की जोड़ी बहुत अच्छी जमेगी। कुंडली में शिव पार्वती जैसे योग हैं।

संबंध तय हो गया और फाल्गुन सप्तमी 10 मार्च 1946 का दिन विवाह के लिए निश्चित हुआ। उसी समय यह भी निश्चित हुआ कि लाली के साथ उनकी आत्मीय सगी श्यामा गाय भी आयेगी। कन्या धन और गोधन दोनों को मथुरा से विदा किया जाएगा। यह भी निश्चित हुआ कि विवाह में धूमधाम नहीं करना है। बहुत सादगी और बिना शोरशराबे के ही पाणिग्रहण संस्कार संपन्न कर लिया जाए।

माँ को प्रणाम करो

विवाह बहुत सादगी से संपन्न हुआ। श्रीराम ने दहेज में खादी की धोती और कुर्ते का कपड़ा ही स्वीकार किया। कन्या धन के रूप में भी गाय के सिवा कुछ नहीं लिया। बारात में ताई जी के अलावा चार लोग और गए थे। संस्कार एक पारिवारिक उत्सव की तरह संपन्न हुआ। वधू के मथुरा आने पर एक यज्ञ का आयोजन किया गया था। गायत्री यज्ञ के समय ही श्रीराम के मित्र एवं परिचित इकट्ठे हुए।

वधू ने आते ही घर के वातावरण को ऐसे आत्मसात कर लिया जैसे इस परिवेश में वे वर्षों से रहती आई हों। उन्हें आये हुए अभी 2-3 दिन ही हुए थे, तीनों बच्चे अभी दूर ही रहते थे। अपरिचय का ही संकोच था वरना वे अपनी नई माँ को दांये-बांये से ताक-झांक कर देख ही लेते थे। उस दिन ताई जी ने बच्चों को घेरा और ज़बरदस्ती बहू के पास भेजा। नववधू आंगन में चटाई पर बैठी घर का कोई काम कर रही थीं। ताई जी ने पहले

ओमप्रकाश को भेजा, फिर दया को और फिर श्रद्धा को। तीनों बच्चे सहमे सकुचे से पास आकर खड़े हो गये। ताई जी कमरे से देख रही थीं। बच्चों को चुपचाप खड़ा देखकर बोलीं, “ओमप्रकाश देख क्या रहा है,पांव छू।” उनकी यह रौबीली आवाज सुनकर ओमप्रकाश आगे बढ़े और पाँव छू लिए। बहूरानी ने ओमप्रकाश, दया और श्रद्धा को हाथ पकड़कर अपने पास बिठा लिया। तीनों के सिर पर हाथ रखा और दुलारते हुए पूछा, “तुम्हारा क्या नाम है, पढ़ाई लिखाई के बारे में पूछा।” बच्चों ने भी सहज कौतूहल से कुछ प्रश्न पूछे। दोनों में किसी को याद नहीं रहा कि क्या पूछा। ताई जी की यह बात बहरहाल ज़रूर कानों में गूंजती है कि “यह तुम्हारी माँ है,इन्हें माँ ही कहना।”

माँ ही कहने का निर्देश इसलिए था कि बच्चों ने नववधू को चाची कह दिया था। वे अपनी जननी ,सरस्वती देवी को भी इसी नाम से संबोधित करते थे। ताई जी ने डपटकर कहा था, “अब तुम लोग बड़े हो गये हो। चाची चाचा कहना बंद कर सही नाम लिया करो।” बच्चे अपने पिता (गुरुदेव) को भी चाचा ही कहा करते थे। परिवार के दूसरे बच्चे भी श्रीराम को चाचा कहते थे। उनकी देखादेखी वे भी यही कहने लगे। ताई जी ने अपने बेटे की गृहस्थी फिर बसने के बाद संबोधनों में सुधार किया और श्रीराम को पिताजी कहने की हिदायत दी। भगवती देवी ने तीनों बच्चों को स्नेह से दुलारने के बाद कहा,”अब ताई जी को परेशान मत करना। कुछ भी चाहिए तो मुझसे कहना।” ओमप्रकाश ने कहा, “हम तो पहले भी परेशान

नहीं करते थे। जब कोई चीज चाहिए होती तो ज़िद करते थे।
ज़िद करना परेशान करने में तो नहीं आता है न माँ ।” श्रद्धा चुपचाप खड़ी रही थी। दया की बाल सुलभ अभिव्यक्ति पर नई माँ के चेहरे पर मुस्कान आ गई। वे अपनी दुलारी की मासूमियत पर हँसे बिना नहीं रह सकी थीं। वे बोली,”ज़िद करना हो तो भी मुझसे ही करना । ताईजी की सिर्फ सेवा ही करना।” यह सब सुनकर ताईजी बाहर निकल आई और बोलीं, “बच्चों को अपनी तरह से रहने दो बहू। सारी जिम्मेदारियाँ खुद न ओढ़ो। उन्हें दादी से भी उलझा रहने दो।” सास की बात का बहु ने कोई उत्तर न दिया , वह चुपचाप नीचे देखती रही। उस दिन के बाद श्रद्धा और दया माँ की पास सोतीं और ओमप्रकाश दादी के पास। कुछ ही दिनों में बच्चे नई माँ के साथ घुल मिल गए।

****